बाल पाटिल और अन्य

बनाम

भारत संघ और अन्य

8 अगस्त, 2005

(आर. सी. लाहोटी, सी.जे, डीएम धर्माधिकारी,

पीके बालासुब्रमण्यन जेजे)

राष्ट्रीय अल्पसंख्यक आयोग अधिनियम, 1992- की धारा 2सी और 9- जैन समुदाय- को अल्पसंख्यक समुदाय घोषित कराने के लिए अल्पसंख्यक समुदाय द्वारा केन्द्रीय सरकार को की गई सिफारिश- रिट याचिका उच्च न्यायालय द्वारा इस आधार पर निस्तारित की गई कि उच्चतम न्यायालय में संविधान पीठ के समक्ष अल्पसंख्यक की स्थिति के संबंध में मामला लंबित है- अपील- संविधान सभा ने निर्णित किया कि अल्पसंख्यकों को राज्यवार माना जाए- केन्द्र सरकार का रूख है कि- समुदाय की स्थिति तय करना राज्य सरकार का काम है- प्रतिपादित: पावर अंतर्गत धारा 2(सी) की शक्ति केन्द्र सरकार में निहित है जो अपने

मुल्याकंन के आधार पर ही निर्धारित की जानी है- आयोग के पास अपनी अधिसूचना और सिफारिशों की पहचान करने की शक्ति नहीं है, जिसका बाध्यकारी प्रभाव नहीं है- पहचान राज्य के आधार पर की जानी चाहिए- यद्यपि निर्धारण समुदाय की सामाजिक, सांस्कृतिक और धार्मिक स्थितियों को ध्यान में रखते हुए होना चाहिए- संख्यात्मक अल्पसंख्यक एकमात्र मानदंड नही हो सकता- भारत का संविधान- अनुच्छेद 25, 26, 27, 28, 29 और 30 अल्पसंख्यक आयोग- कार्य- क्षेत्र और प्रकृति- अभिनिर्धारित: आयोग को इस तरह से कार्य करना चाहिए कि अल्पसंख्यक और बहुसंख्यक वर्गों का धीरे-धीरे उन्मूलन करके राष्ट्र की अखण्डता और एकता बनाए रखी जा सके।

राष्ट्रीय अल्पसंख्क आयोग ने 'जैन' समुदाय के पक्ष में सिफारिशे की। अपीकर्ता संगठन ने 'जैनियों' को अल्पसंख्यक समुदाय के रूप में अधिसूचित करने के लिए केन्द्र सरकार को निर्देश जारी करने की मांग करते हुए रिट याचिका अंतर्गत धारा 2 (सी) राष्ट्रीय अल्ससंख्यक आयोग अधिनियम 1992 के तहत दायर की। उच्च न्यायालय ने इस आधार पर याचिका का निस्तारण किया कि संवैधानिक सुरक्षा प्राप्त करने के उद्देश्य से अल्पसंख्यक की स्थिति के लिए विभिन्न समुदायों का दावा उच्चतम न्यायालय के समक्ष टी.एम.ए. पाई मामले में लम्बित मुख्य मुद्दों में से एक था। इसलिए वर्तमान अपील, टी.एम.ए पाई मामले में यह माना गया

था कि धार्मिक और भाषाई अल्पसंख्यकों का राज्यवार विचार किया जाना चाहिए ना कि देशवार। निर्णसुप्रीम कोर्ट रिपोर्टस 2005 एसयूपीपी 2 एस.सी.आर.य के बाद केन्द्र सरकार ने यह रूख अपनाया कि इस निर्णय को ध्यान में रखते हुए यह राज्य सरकार को तय करना है कि क्या जैन समुदाय को अल्पसंख्यक वर्ग माना जाना चाहिए।

न्यायालय ने अपील का निपटारा करते अभिनिर्धारित किया:

1.1. राष्ट्रीय अल्पसंख्यक आयोग अधिनियम, 1992 की धारा 9 के तहत उल्लेखित आयोग के सामान्य कार्यों को देखते हुए गणना की गई है जो केवल उदाहरणात्मक है और सम्पूर्ण नहीं है, यह नहीं कहा जा सकता है कि आयोग ने सदस्यों के प्रतिनिधित्व, मांगों और प्रति-मांगों पर विचार करने में अपने अधिकार का उल्लघंन किया है। 'अल्पसंख्यक' को दर्जा देने के लिए अधिनियम के प्रावधानों को ध्यान में रखते हुए, आयोग द्वारा जैनियों के पक्ष में की गई सिफरिश सलाह की प्रकृति में है और इस का कोई बाध्यकारी प्रभाव नहीं हो सकता है। अधिनियम की धारा 2 (सी) के तहत शक्ति केन्द्र सरकार निहित है, जिसे अकेले स्वयं के आकलन के आधार पर एक समुदाय द्वारा अल्पसंख्यक की स्थिति के दावे को स्वीकार या अस्वीकार करना पड़ता है। (465- डी ई)

1.2. *टी.एम.ए पाई फाउंडेशन* मामले में, फैसले के बाद कानूनी स्थिति स्पष्ट हो गई कि अब से भाषाई और धार्मिक अल्पसंख्यकों दोनों की

स्थिति निर्धारित करने की इकाई 'राज्य होगी। अब से केन्द्र सरकार द्वारा अधिनियम की धारा 2 (सी) के तहत जैनियों के 'अल्पसख्यक' के दावांे का निर्णय लेने से पहले, पहचान राज्य-वार आधार पर की जानी है। केन्द्र सरकार की शक्तियों का प्रयोग केवल आयोग की सलाह और सिफारिश पर नहीं बल्कि प्रत्येक राज्य में जैन समुदाय की सामाजिक, सांस्कृतिक और धार्मिक स्थितियों पर विचार करते हुए किया जाना चाहिए। यह दिखाने के लिए तैयार किया गया सांख्यिकीय डेटा की एक समुदाय संख्यात्मक रूप से अल्पसंख्यक है, एकमात्र मापदण्ड नहीं हो सकता है। अनुच्छेद 25 से 30 के समुह में निहित प्रावधान धार्मिक और भाषाई अल्पसंख्यकों की धार्मिक स्वतंत्रता के मौलिक अधिकार के संभावित हनन के खिलाफ एक सुरक्षात्मक छत्र है। [465 एफ.जी. 466 डी एफ]

2. अल्पसंख्याकों के लिए गठित आयोग को अल्पसंख्यक और बहुसंख्यक वर्गों को धीरे-धीरे समाप्त करके भारत की अखण्डता और एकता बनाए रखने की अपनी गतिविधियों को निर्देशित करना होगा।

यदि, केवल एक अलग धार्मिक विचार या कम संख्यात्मक शक्ति या स्वास्थ्य, धन, शिक्षा, शक्ति या सामाजिक अधिकारों की कमी के आधार पर, भारतीय समाज के एक वर्ग के 'अल्पसंख्यक' के दर्जे के दावे पर विचार किया जाता है और स्वीकार किया जाता है, तो भारत जैसे बहुधार्मिक और बहु भाषाई समाज में ऐसे दावों का कोई अंत नही होगा।

जातिग्रस्त भारतीय समाज में, कोई भी वर्ग या लोगों का विशिष्ट समूह बहुसंख्यक होने का दावा नहीं कर सकता है। यदि प्रत्येक अल्पसंख्यक समूह दूसरे से डरेगा तो आपसी भय और अविश्वास का माहोल हमारे राष्ट्र की अखंडता के लिए गंभीर खतरा उत्पन्न करेगा। इससे भारत में बहुराष्ट्रीयता का बीजारोपण होगा। इसलिए, यह आवश्यक है कि अल्पसंख्यक आयोग इस प्रकार कार्य करें जिससे भारत के लोगों के विभिन्न वर्गों में बहुराष्ट्रीयता की भावना उत्पन्न होने से रोका जा सकें, आयोग को अधिनियम के तहत अधिसूचित अल्पसंख्यकों की सूची में जोड़े जाने के लिए विभिन्न समुदायों के दावों को प्रोत्साहित करने के बजाय ऐसी सामाजिक स्थितिया बनाने में मदद करने के तरीके और साधन सुझाने चाहिए, जिससे अधिसूचित अल्सपसंख्यकों की सूची धीरे-धीरे कम हो जाए और पूरी तरह समाप्त हो जाए। (472-सीएफ)

टी.एम.ए. पाई फाउंडेशन बनाम कर्नाटक राज्य [2002] 8 एससीसी 481, का अनुसरण किया।

सिविल अपीलीय न्याय क्षेत्राधिकारिता: सिविल अपील संख्या 4730/1999

बॉम्बे उच्च न्यायालय के डब्ल्यू.पी. नम्बर 1998 की संख्या 4066 के निर्णय और आदेश दिनांकित 17.09.98 से।

अपीलार्थियों की ओर से उपस्थित- यू. यू. ललित प्रसेनजीत केसवानी, नितिन सागरा, अमील चिताले और प्रशांत कुमार।

उत्तरदाताओं की ओर से उपस्थित- बी. दत्ता., सहायक महाधिवक्ता श्रीमती रेखा पाण्डे और हेमन्त शर्मा, अधिवक्तागण।

न्यायालय द्वारा पारित निर्णय: धर्माधिकारी, जेः

अपीलार्थी जैन समुदाय के एक वर्ग का प्रतिनिधित्व करने वाला एक संगठन है। इसने राष्ट्रीय अल्पसंख्यक आयोग अधिनियम, 1992 (जल्द ही अधिनियम के रूप में संदर्भित) की धारा 2 (सी) के तहत ''जैनियों' को 'अल्पसंख्यक' समुदाय के रूप में अधिसूचित किए जाने के लिए केन्द्र सरकार को एक आदेश/निर्देश जारी करने की मांग करते हुए बॉम्बे उच्च न्यायालय में एक रिट याचिका दायर की। अधिनियम की धारा 2 (सी) अल्पसंख्यक को इस प्रकार परिभाषित करती है:-

> '' इस अधिनियम के प्रयोजनों के लिए अल्पसंख्यक का अर्थ है केन्द्र सरकार द्वारा अधिसूचित समुदाय''

बॉम्बे उच्च न्यायालय ने आक्षेपित आदेश में याचिका का सरलता से इस आधार पर निस्तारण किया गया कि संवैधानिक सुरक्षा प्राप्त करने के उद्देश्य से 'अल्पसंख्यक' की स्थिति के लिए विभिन्न समुदायों का दावा इस न्यायालय के ग्यारह न्यायाधिशों की खण्डपीठ समक्ष टी.एम.ए. पाई

फाउंडेशन (2002) 8 एससीसी 481 मामले में लम्बित मुख्य मुद्दों में से एक था।

टी.एम.ए. पाई फाउंडेशन मामले में फैसले की प्रतीक्षा में यह अपील कई तारीखों पर स्थगित रही। केन्द्रीय सरकार द्वारा दायर जवाबी हलफनामें में कथन किया गया कि वे टीएमए पाई फाउंडेशन मामले में ग्यारह न्यायाधीशों की पीठ के फैसले का पालन करेंगे और उसके बाद अधिनियम के तहत जैनियों के अल्पसंख्यक समुदाय के दर्जे के दावे पर विचार करेंगे।

इस अपील के लम्बित रहने के दौरान ग्यारह न्यायाधीशो की पीठ द्वारा टी.एम.ए. पाई मामले में निर्णय पारित किया गया और इस निर्णय की सूचना 2002, 8 एस.सी.पी. 481 में दी गई है।

ग्यारह न्यायाधीशों की पीठ द्वारा उत्तर के लिए तैयार किए गए कई कई प्रश्नों में सबसे महत्वपूर्ण प्रश्न निम्न था:

> ''भारत के संविधान के अनुच्छेद 30 में 'अल्पसंख्यक' अभिव्यक्ति का क्या अर्थ और विषय-वस्तु क्या है ?''

ग्यारह न्यायाधीशों की खण्डपीठ के माध्यम से बोलते हुए बहुमत की राय में कृपाल, मुख्य न्यायाधीश (तत्कालीन) द्वारा निम्नलिखित उत्तर दिया गया:-

जवाब: संविधान के अनुच्छेद 30 के तहत''   ''

के अंतर्गत के अंतर्गत भाषाई और धार्मिक अल्पसंख्यक आते हैं। चूंकि भारत में राज्यों का पुर्नगठन भाषाई आधार पर हुआ है, इसलिए अल्पसंख्यक निर्धारण के लिए इकाई राज्य होगा, सम्पूर्ण भारत नहीं। इस प्रकार, अनुच्छेद 30 में धार्मिक और भाषाई अल्पसंख्यकों को बराबर रखा गया है, जिसपर राज्यवार विचार किया जाना चाहिए।

(महत्व दिया गया)

ग्यारह न्यायाधीशों की पीठ के मामले (उपरोक्त) के निर्णय के बाद, केन्द्र सरकार द्वारा अपने संयुक्त सचिव, सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय के माध्यम से अतिरिक्त हलफनामा दायर किया गया है। इस अदालत के समक्ष इस अपील में अब केंद्र सरकार द्वारा अपनाया गया रुख यह है कि टी. एम. ए. पाई मामले (उपरोक्त) में बहुमत की राय द्वारा निर्धारित कानून के अनुसार, यह राज्य सरकार को तय करना है कि

''क्या जैन समुदाय को उस राज्य में उनकी परिस्थितियों स्थितियों को ध्यान में रखते हुए उनके संबंधित राज्यों में अल्पसंख्यक समुदाय के रूप में माना जाना चाहिए।" यह भी सूचित किया जाता है कि छत्तीसगढ़, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश और उत्तरांचल की राज्य सरकारों ने पहले ही संबंधित राज्य अल्पसंख्यक आयोग अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार जैनियों को 'अल्पसंख्यक' के रूप में अधिसूचित कर दिया है।

'*ग्यारह न्यायाधीशों*' की पीठ द्वारा (उपरोक्त) निर्णय में घोषित कानून

और और केंद्र सरकार द्वारा लिए गए परिणामी रुख के आलोक में विद्वान अधिवक्ता यू. यू. ललित ने दृढ़ता से आग्रह किया कि राष्ट्रीय स्तर पर एक समुदाय को 'अल्पसंख्यक' के रूप में अधिसूचित करने के उद्देश्य से, केंद्र सरकार, जिसे धारा 2 (सी) के तहत किसी विशेष समुदाय के दावे पर विचार करने का अधिकार है, अधिसूचित होने के लिए विशेष समुदाय के दावे पर विचार करने का अधिकार है, अपनी वैधानिक जिम्मेदारी से बच नहीं सकती। यह तर्क दिया गया है कि गयारह न्यायाधीशों की खण्डपीठ का मामला राज्य सरकारें राज्य पुनर्गठन अधिनियम, 1956 के तहत भाषाई आधार पर गठित राज्यों में एक समुदाय की अल्पसंख्यक स्थिति का निर्धारण कर सकती हैं, अधिनियम की धारा 2 (सी) के तहत केंद्र सरकार की शक्ति को निरर्थक नहीं बनाता है।

इस अदालत के समक्ष जैन समुदाय के सदस्यों के दावे का प्रतिनिधित्व करने वाले विद्वान अधिवक्ता ने आगे कथन कि अधिनियम की धारा 2 (सी) एवम अधिनियम के उद्देश्य के अनुसार मुसलमानों, ईसाइयों, सिखों, बौद्धों, पारसीयों (पारसी) को पहले ही अल्पसंख्यक समुदायों के रूप में अधिसूचित किया जा चुका है और जैनियों ने अपने धार्मिक अल्पसंख्यक होने के अपने दावे को प्रमाणित किया है। अधिनियम के तहत उन्हें अधिसूचित करने से इंकार करना अनुचित है और केन्द्र सरकार की वैधानिक शक्तियों का हनन है।

हमने केन्द्र सरकार की ओर से पेश अतिरिक्त महान्यायवादी श्री बी. दत्ता को सुना है, जिन्होंने केवल सरकार की ओर से दायर हल्फनामे में लिए गए रूख को दोहराया कि *टी.एम.ए. पाई* मामला (उपरोक्त) में फेसले को देखते हुए, केन्द्र सरकार की अब से कोई भूमिका नहीं होगी। संबंधित राज्य सरकारों को जैनियों के दावे पर उनकी सामाजिक स्थिति के आधार पर यह निर्णय लेना है।

संविधान के अनुच्छेद 29 और 30 में 'अल्पसंख्यक' शब्द का प्रयोग किया गया है लेकिन इसे कहीं भी परिभाषित नहीं किया गया है। संविधान की प्रस्तावना प्रत्येक नागरिक को विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास और पूजा की स्वतंत्रता की गारंटी देने की घोषणा करती है। अनुच्छेद 25 से 30 का समूह बहुसंख्यक और अल्पसंख्यक दोनों समुदायों को धार्मिक, सांस्कृतिक और शैक्षिक अधिकारों की सुरक्षा की गांरटी देता है। ऐसा प्रतीत होता है कि सभी नागरिकों के सांस्कृतिक, शैक्षिक और धार्मिक अधिकारों की सुरक्षा की संवैधानिक गारंटी को ध्यान में रखते हुए, 'अल्पसंख्यक' को परिभाषित करना आवश्यक नहीं समझा गया, जैसा की संवैधानिक योजना से समझा जाता है, अल्पसंख्यक लोगों या समुदाय के एक पहचाने जाने योग्य समूह को अपने धर्म के सम्भावित अभाव से सुरक्षा के पात्र के रूप में दर्शाता है। इसे अन्य समुदायों द्वारा उनके धार्मिक, सांस्कृतिक और शैक्षणिक अधिकारों से संभावित रूप से वंचित किए जाने से सुरक्षा के योग्य माना जाता है, जो

बहुसंख्यक हैं और चुनाव के आधार पर सरकार के लोकतांत्रिक स्वरूप में राजनीतिक शक्ति हासिल की सम्भावना रखते हैं।

संवैधानिक योजना की पृष्ठभूमि में अधिनियम के प्रावधान 'अल्पसंख्यक' की परिभाषा देने के बजाय केवल कुछ समुदायों को 'अल्पसंख्यक' के रूप में अधिसूचित करने का प्रावधान करते हैं, जिनके लिए विशेष उपचार और उनके धार्मिक, सांस्कृतिक और शैक्षिक अधिकारों की सुरक्षा की आवश्यकता हो सकती है। अधिनियम के तहत धारा 2 सी में दी गई अल्पसंख्यक की परिभाषा वास्तव में ऐसी परिभाषा नहीं है, बल्कि केवल एक प्रावधान है जो केंद्र सरकार को एक समुदाय को अल्पसंख्यक के रूप में पहचानने में सक्षम बनाता है, जो केंद्र सरकार की सुविचारित राय में आयोग के माध्यम से इसकी प्रगति और विकास की सुरक्षा और निगरानी के उद्देश्य से अधिसूचित किया जाना चाहिए।

अधिनियम के उद्देश्यों और कारणों का विवरण इस प्रकार है:-

> "अल्पसंख्यक आयोग की स्थापना जनवरी, 1978 को अल्पसंख्यकों की सुरक्षा के लिए संविधान में प्रदान किए गए सुरक्षा उपायों के मूल्यांकन के लिए एक संस्थागत व्यवस्था प्रदान करने और सुरक्षा उपायों और कानूनों के कार्यान्वयन को सुनिश्चित करने के लिए सिफारिशें करने के लिए की गई थी। वैधानिक दर्जा प्राप्त अल्पसंख्यक आयोग

अल्पसंख्यकों में आयोग के कामकाज और प्रभावशीलता के बारे में विश्वास पैदा करेगा। इसका राज्य सरकारों/केंद्र शासित प्रदेश प्रशासनों और मंत्रालयों/विभागों तथा केंद्र सरकार के अन्य संगठनों पर भी अधिक प्रभाव पड़ेगा। इसलिए, प्रस्तावित कानून द्वारा अल्पसंख्यक आयोग को वैधानिक दर्जा देने का निर्णय लिया गया है। राष्ट्रीय अल्पसंख्यक आयोग में एक अध्यक्ष और छह सदस्य होंगे। अल्पसंख्यकों के अधिकारों और सुरक्षा उपायों से वंचित होने के संबंध में विशिष्ट शिकायतों को देखने के अलावा आयोग का मुख्य कार्य अल्पसंख्यकों के विकास की प्रगति का मूल्यांकन करना, अल्पसंख्यकों के हितों की सुरक्षा के लिए संविधान और केंद्र सरकार द्वारा अधिनियमित कानूनों में प्रदान किए गए सुरक्षा उपायों के कामकाज की निगरानी करना होगा। यह अल्पसंख्यकों के सामाजिक-आर्थिक और शैक्षिक विकास से संबंधित मुद्दों पर अध्ययन, अनुसंधान और विश्लेषण भी कराएगा और केंद्र सरकार या राज्य सरकारों द्वारा अल्पसंख्यकों की सुरक्षा और हितों के लिए उपायों के प्रभावी कार्यान्वयन के लिए सिफारिशें करेगा। यह केंद्र सरकार या राज्य सरकार द्वारा किए जाने वाले किसी भी अल्पसंख्यक के संबंध में उचित उपाय भी सुझा सकता

है।"

अधिनियम के तहत गठित आयोग के पास करने के लिए कई कार्य हैं जो धारा 9 में प्रदान किए गए हैं। सौंपे गए कार्य 'अल्पसंख्यकों' की प्रगति और विकास सुनिश्चित करने और उनके धार्मिक, सांस्कृतिक और शैक्षिक अधिकारों की रक्षा करने के लिए हैं। धारा 9 के तहत आयोग को किसी भी समुदाय को अल्पसंख्यक के रूप में पहचानने और केंद्र सरकार को सिफारिश करने का कोई विशिष्ट कार्य नहीं दिया गया है कि इसे अधिनियम की धारा 2 सी के तहत अधिसूचित किया जाए।

धारा 9 के तहत गिनाए गए आयोग के सामान्य कार्यों पर विचार करने पर, जो केवल उदाहरणात्मक हैं और संपूर्ण नहीं हैं, यह नहीं कहा जा सकता है कि आयोग ने 'अल्पसंख्यक' की स्थिति के लिए जैन समुदाय के सदस्यों के प्रतिनिधित्व, मांगों और प्रति-मांगों पर विचार करने में अपने अधिकार का उल्लंघन किया है। अधिनियम के प्रावधानों को ध्यान में रखते हुए, आयोग द्वारा जैनियों के पक्ष में की गई सिफारिश सलाह की प्रकृति में है और इसका कोई बाध्यकारी प्रभाव नहीं हो सकता है। अधिनियम की धारा 2(सी) के तहत शक्ति केंद्र सरकार में निहित है, जिसे अकेले अपने मूल्यांकन के आधार पर किसी समुदाय द्वारा अल्पसंख्यक की स्थिति के दावे को स्वीकार या अस्वीकार करना होता है।

टीएमए पाई फाउंडेशन मामले (उपरोक्त) में ग्यारह न्यायाधीशों की पीठ के फैसले के बाद, कानूनी स्थिति स्पष्ट हो गई है कि अब से भाषाई और धार्मिक अल्पसंख्यकों दोनों की स्थिति निर्धारित करने की इकाई 'राज्य होगी। यह स्थिति न केवल प्रश्न संख्या के निष्कर्ष में दिए गए उत्तर से दोगुनी स्पष्ट है जैसा मैंने ऊपर उद्धृत किया है बल्कि इसके बाद बहुमत के फैसले के पैरा 76 और 81 में निहित टिप्पणियों को भी, जिन्हें इसके पश्चात् उद्धृत किया है।

> *"76 इसलिए, यदि राज्य को अनुच्छेद 30 की तुलना में "भाषाई अल्पसंख्यक" के निर्धारण के लिए इकाई माना जाना है, तो" "*
>
> *के साथ बहुसंख्यक या अल्पसंख्यक स्थिति के संबंध में निर्धारण भी राज्य को ही करना होगा।*
>
> 81 सूची में प्रविष्टि 25 को शामिल करने के परिणामस्वरूप संसद अब शिक्षा के संबंध में कानून बना सकती है जो पहले केवल राज्य का विषय था। संसद का अधिकार क्षेत्र संपूर्ण भारत या उसके कुछ भाग के लिए कानून बनाना है। यह सर्वविदित है कि भौगोलिक वर्गीकरण अनुच्छेद 14 का उल्लंघन नहीं है। इसलिए, यह संभव होगा कि, किसी विशेष राज्य या राज्यों के समूह के संबंध में, संसद शिक्षा के

संबंध में कानून बना सकती है। हालाँकि, अनुच्छेद 30 किसी राज्य के भाषाई या धार्मिक अल्पसंख्यक को अपनी पसंद के शैक्षणिक संस्थान स्थापित करने और प्रशासित करने का अधिकार देता है। अनुच्छेद 30 के प्रयोजन के लिए अल्पसंख्यक के अलग अलग अर्थ नहीं हो सकते, जो इस बात पर निर्भर करता है कि कौन कानून बना रहा है। *अनुच्छेद 30 के प्रयोजनों के लिए भाषा विभिन्न राज्यों की स्थापना का आधार है, इसलिए उस राज्य के संबंध में एक भाषाई अल्पसंख्यक निर्धारित करना होगा जिसमें शैक्षणिक संस्थान स्थापित करने की मांग की गई है। धार्मिक अल्पसंख्यकों के संबंध में स्थिति समान है, क्योंकि अनुच्छेद 30 में धार्मिक और भाषाई अल्पसंख्यकों दोनों को एक बराबर रखा गया है।"*

(महत्व जोड़ें)

अब से, केंद्र सरकार द्वारा अधिनियम की धारा 2 सी के तहत जैनियों के अल्पसंख्यक के दावों पर निर्णय लेने से पहले, पहचान राज्य के आधार पर की जानी होगी। केंद्र सरकार की शक्ति का प्रयोग केवल आयोग की सलाह और सिफारिश पर नहीं बल्कि प्रत्येक राज्य में जैन समुदाय की सामाजिक, सांस्कृतिक और धार्मिक स्थितियों पर विचार करने पर किया

जाना चाहिए। यह दिखाने के लिए तैयार किया गया सांख्यिकीय डेटा कि कोई समुदाय संख्यात्मक रूप से अल्पसंख्यक है, एकमात्र मानदंड नहीं हो सकता। यदि यह पाया जाता है कि समुदाय के अधिकांश सदस्य उद्योगपतियों, व्यापारियों, पेशेवरों और संपत्ति वर्ग के समृद्ध वर्ग से संबंधित हैं, तो उन्हें अधिनियम के तहत अधिसूचित करना और उनके लिए कोई विशेष उपचार या सुरक्षा प्रदान करना आवश्यक नहीं हो सकता है। अल्पसंख्यक के रूप में अनुच्छेद 25 से 30 के समूह में निहित प्रावधान धार्मिक और भाषाई अल्पसंख्यकों के धार्मिक स्वतंत्रता के मौलिक अधिकार के संभावित अभाव के खिलाफ एक सुरक्षात्मक छत्र है।

राष्ट्रीय अल्पसंख्यक आयोग द्वारा जैनियों के पक्ष में सिफारिश टीएमए पाई मामले (उपरोक्त) मेंं इस न्यायालय की ग्यारह न्यायाधीशों की पीठ के समक्ष की गई थी, जिसमें संवैधानिक संरक्षण बढ़ाने के उद्देश्य से 'अल्पसंख्यक' की अवधारणा को स्पष्ट किया गया था।

इस आधार पर जैन समुदाय के कुछ सदस्यों के दावे का कोई निर्देश या आदेश जारी करना इस अदालत का काम नहीं है, जिसका उसी समुदाय का एक अन्य वर्ग विरोध कर रहा है।

इस मामले के अतिरिक्त, पहले यह न्यायालय कुछ टिप्पणियाँ करने से स्वयं को रोक नहीं सकता है, जो संवैधानिक परिप्रेक्ष्य में राष्ट्रीय और राज्य अल्पसंख्यक आयोगों को अधिनियम के प्रावधानों के तहत उनके

कार्यों के दायरे और प्रकृति और उनकी भूमिका की याद दिलाने के लिए आवश्यक मानी जाती हैं।

भारत के स्वतंत्रता संग्राम का इतिहास इस तथ्य का पर्याप्त साक्ष्य देता है कि 'अल्पसंख्यक' की अवधारणा और उनके धार्मिक और सांस्कृतिक अधिकारों की विशेष देखभाल और सुरक्षा की मांग ब्रिटिश शासन के लगभग 150 वर्षों में रुक-रुक कर होने वाले धार्मिक संघर्षों के कड़वे अनुभव के बाद उठी। विभाजन की मांग ने उस समय जोर पकड़ लिया जब अंग्रेजों ने भारतीयों को स्वशासन सौंपकर चले जाने का निर्णय लिया। अंग्रेजों ने हमेशा हिंदुओं और मुसलमानों के साथ नागरिकों के दो अलग-अलग समूहों के रूप में व्यवहार किया, जिन्हें अलग-अलग व्यवहार की आवश्यकता थी। बड़े पैमाने पर अंतर-विवाह और भारत में समुदायों के कई वर्गों के ईसाई धर्म में रूपांतरण के परिणाम स्वरूप उन समूहों में एंग्लो-इंडियन और ईसाई भी जुड़ गए। भारतीयों को स्वशासन सौंपने के लिए भारत के स्वतंत्रता अधिनियम के पारित होने से पहले, अंग्रेजों ने धीरे-धीरे भारतीयों को कुछ लोकतांत्रिक अधिकार प्रदान करने के क्रम में, हिंदुओं की और मुसलमान आबादी के अनुपात में विधायिका में कुछ सीटों के आरक्षण पर अलग निर्वाचन क्षेत्रों के गठन पर विचार किया। उस प्रयास का हिंदू और मुस्लिम दोनों के प्रमुख राष्ट्रीय नेताओं ने कड़ा विरोध किया, जिन्होंने भारत की स्वतंत्रता के संघर्ष में संयुक्त रूप से और सक्रिय रूप से भाग

लिया था।

हालाँकि, अलग-अलग निर्वाचन क्षेत्र बनाने और हिंदुओं और मुसलमानों की आबादी के आधार पर सीटों का आरक्षण करने के अंग्रेजों के प्रयास ने अंततः स्वतंत्र भारत में बनने वाली पहली निर्वाचित सरकार में निर्वाचन क्षेत्रों और सीटों के आरक्षण की मांग को पुनर्जीवित कर दिया। हिंदू और कुछ मुस्लिम नेताओं द्वारा ऐसी मांगों के विरोध के कारण अंततः भारत का विभाजन हुआ और एक अलग मुस्लिम राज्य का गठन हुआ जिसे वर्तमान में पाकिस्तान के नाम से जाना जाता है।

धार्मिक आधार पर सीटों के आरक्षण के प्रतिस्पर्धी दावों से संबंधित कई अन्य खुलासे प्रमुख राष्ट्रीय नेता स्वर्गीय अब्दुल कलाम आज़ाद की निजी डायरी से किए जा सकते हैं। आजादी के 25 साल बाद ही उनकी अंतिम इच्छा के अनुरूप यह डायरी सार्वजनिक कर दी गई। आज़ाद की डायरी के प्रकाशन ने संवैधानिक विशेषज्ञ एच. एम. सीरवई के लिए 'भारत के संवैधानिक कानून' पर अपनी पुस्तक में 'भारत का विभाजन किंवदंती और वास्तविकता' शीर्षक के तहत अपने अध्याय को फिर से लिखना आवश्यक बना दिया। अनेक आशंकाएँ और शंकाएँ व्यक्त की गईं और मुसलमानों के मन को परेशान किया गया। उन्होंने सोचा कि भारत में स्थापित होने वाले लोकतंत्र में, बहुसंख्यक होने के नाते हिंदू हमेशा हावी रहेंगे और अपनी मतदान शक्ति के आधार पर राजनीतिक शक्ति बनाए

रखेंगे। कई प्रमुख मुस्लिम नेताओं द्वारा यह भी आशंका व्यक्त की गई थी कि उनके सांस्कृतिक, धार्मिक और शैक्षिक अधिकारों में हस्तक्षेप और हतोत्साहित किया जा सकता है। अब्दुल कलाम आज़ाद ने उस समय के राष्ट्रीय नेताओं अर्थात् एक तरफ स्वर्गीय नेहरू और पटेल और दूसरी तरफ स्वर्गीय जिन्ना और लियाकत अली के बीच बातचीत में मध्यस्थ के रूप में काम किया। नेहरू और पटेल ने आग्रह किया कि नये संविधान में विभिन्न धार्मिक आस्थाओं और संस्कृतियों के लोगों से संबंधित अखंड भारत में सभी को अपने सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक और अन्य संवैधानिक अधिकारों की पूर्ण स्वतंत्रता है। उन्होंने प्रत्येक भारतीय के लिए उसकी भाषा या धर्म की परवाह किए बिना एक ही नागरिकता की वकालत की। मुस्लिम नेताओं के विरोधी समूह ने, अपने समुदाय के सदस्यों के हित में, उन्हें उनकी जनसंख्या के अनुपात में लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं में भागीदारी प्रदान करने पर जोर दिया और इस प्रकार हिंदू बहुमत के संभावित वर्चस्व को संतुलित किया। उन्होंने इस बात पर भी जोर दिया कि उनकी आबादी के आधार पर अलग-अलग चुनावी निर्वाचन क्षेत्र बनाए जाएं और भारत के विभिन्न हिस्सों में उनके लिए सीटें आरक्षित की जाएं। स्वर्गीय अब्दुल कलाम आज़ाद ने बीच का रास्ता खोजने और इस तरह दो विरोधी समूहों के बीच गतिरोध को तोड़ने की पूरी कोशिश की, लेकिन नेहरू और पटेल दृढ़ रहे और जिन्ना और लियाकत अली के प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया। दुखद परिणाम यह हुआ कि तत्कालीन सिंध, पंजाब और

बलूचिस्तान राज्यों में सबसे अधिक मुस्लिम आबादी वाले प्रांतों को एक अलग धार्मिक राष्ट्र पाकिस्तान बनाने के लिए छोड़ना पड़ा। एच.एम. सीरवई द्वारा लिखित 'भारत का संवैधानिक कानून' का चौथा संस्करण, खंड एक का पेज 153. पैरा 1.314 देखें।

> "1.314. आज़ाद हिंदू-मुस्लिम एकता में पूरी लगन से विश्वास करते थे, लेकिन उन्होंने पाया कि बीस के दशक के मध्य से गांधीजी ने हिंदू-मुस्लिम एकता में रुचि खो दी थी और इसे सुरक्षित करने के लिए कोई कदम नहीं उठाया। इसके अलावा, आज़ाद ने एक रूपरेखा प्रदान करने में अग्रणी भूमिका निभाई थी। एक स्वतंत्र और एकजुट भारत के संविधान के लिए, जिस पर कैबिनेट मिशन योजना काफी हद तक आधारित थी, एक ऐसी योजना जिसने भारत को एकजुट रहने का आखिरी मौका दिया। हालांकि, गांधी, नेहरू और पटेल ने योजना को नष्ट कर दिया, और इसके बजाय विभाजन स्वीकार कर लिया। आज़ाद ने भारत के विभाजन को रोकने की पूरी कोशिश की, लेकिन वह नेहरू और गांधी को विभाजन स्वीकार न करने के लिए मनाने में विफल रहे।"

विभाजन की पृष्ठभूमि के विरोध में भारत के संविधान को अंतिम रूप

देते समय, मुसलमानों और अन्य धार्मिक समुदायों को उनकी धार्मिक, सांस्कृतिक और शैक्षिक अधिकार सुरक्षा की विशेष गारंटी और सुरक्षा प्रदान करके उनके मन में मौजूद आशंकाओं और भय को दूर करना आवश्यक महसूस किया गया। स्वतंत्र भारत की एकता और अखंडता को बनाए रखने के लिए इस तरह की सुरक्षा आवश्यक पाई गई क्योंकि भारत के विभाजन के बाद भी, भारत के विभिन्न हिस्सों में रहने वाले बड़ी संख्या में मुस्लिम और ईसाई जैसे समुदायों ने भारत में अपनी मिट्टी के बच्चों के रूप में रहना जारी रखने का विकल्प चुना।

उपरोक्त उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए संविधान निर्माताओं ने भारत के संविधान में अनुच्छेद 25 से 30 के समूह को शामिल किया। शुरू में पहचाने गए अल्पसंख्यक, धर्म और राष्ट्रीय स्तर जैसे मुस्लिम, ईसाई, एंग्लो-इंडियन और पारसी पर आधारित थे। मुसलमान सबसे बड़े धार्मिक अल्पसंख्यक हैं क्योंकि भारत में मुगल शासन काल सबसे लंबे समय तक रहा, उसके बाद ब्रिटिश शासन आया, जिसके दौरान कई भारतीयों ने मुस्लिम और ईसाई धर्म अपनाए थे।

पारसी संख्यात्मक रूप से छोटे अल्पसंख्यक थे। वे अपने मूल राज्य ईरान से चले गए थे और गुजरात के तटों पर बस गए थे और गुजराती भाषा और रीति-रिवाजों को अपना लिया था और इस तरह खुद को भारतीय आबादी में शामिल कर लिया था।

संविधान निर्माण के समय सिखों और जैनों जैसे तथाकथित अल्पसंख्यक समुदायों को राष्ट्रीय अल्पसंख्यकों के रूप में नहीं माना गया था... वास्तव में, सिखों और जैनियों को व्यापक हिंदू समुदाय का हिस्सा माना गया है, जिनके अलग-अलग संप्रदाय, आस्था, पूजा के तरीके और धार्मिक दर्शन हैं।। विभिन्न संहिताबद्ध प्रथागत कानूनों जैसे हिंदू विवाह अधिनियम, हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, हिंदू दत्तक ग्रहण और भरण पोषण अधिनियम और संविधान के पूर्व और बाद की अवधि के अन्य कानूनों में, 'हिंदू' की परिभाषा में सिख और जैन सहित हिंदू धर्मों के सभी संप्रदायए उप.संप्रदाय शामिल थे।

'हिन्दू शब्द भारत में रहने वाले विभिन्न समुदायों के समूहों की छवि व्यक्त करता है। यदि आप हिंदू नाम से किसी व्यक्ति को खोजते हैं, तो वह अज्ञात है। उनकी पहचान केवल उनकी जाति के आधार पर की जा सकती है जैसे कि उच्च जाति के ब्राह्मण, क्षत्रिय या वैश्य या प्राचीन भारत में वर्णित निचली जाति के शूद्र। जो लोग 'शूद्र के हिंदू वर्ग में आते हैं, उन्हें अब उनके उत्थान के लिए विशेष विशेषाधिकार और उपचार के साथ संविधान में अनुसूचित जाति की श्रेणी में शामिल किया गया है, उन्हें हिन्दु समाज की उच्च जातियों की बराबरी पर लाने के लिए यह आवश्यक पाया गया। जिन आदिवासियों की कोई जाति नहीं होती, उन्हें हिंदू समाज की चार जातियों या वर्णों से अलग माना जाता था। संविधान में उनके साथ

अनुसूचित जनजाति के रूप में अनुकूल व्यवहार किया गया है। उनके लिए भी भारतीय समाज की मुख्य उन्नत धाराओं की अन्य जातियों के बराबर लाने के लिए विशेष उपचार और विशेष विशेषाधिकार देने के प्रावधान हैं।

धार्मिक दार्शनिकों और इतिहासकारों के बीच इस बात पर बहुत गंभीर बहस और मतभेद है कि क्या जैन हिंदू समुदाय के हैं और क्या उनका धर्म हिंदुओं के वैदिक धर्म से अधिक प्राचीन है। हिंदुओं और जैनियों का आध्यात्मिक दर्शन कई मायनों में अलग है लेकिन दोनों धर्मों के आध्यात्मिक विचारों का सार एक ही प्रतीत होता है। जैनियों के रीति-रिवाज, रहन-सहन, आस्था और विश्वास में हिंदू वैदिक धर्म का प्रभाव स्पष्ट दिखता है। जैन भगवान की छवियों या मूर्तियों की पूजा नहीं करते हैं, बल्कि अपने तीर्थंकरों की पूजा करते हैं, जिसका अर्थ है उनके आदर्श व्यक्तित्व जिन्होंने आत्म-सुधार की प्रक्रिया से मानवीय पूर्णता और उत्कृष्टता प्राप्त की है। 'जैन' शब्द का शाब्दिक अर्थ है जिसने 'विजय' प्राप्त कर ली हो। यह उस व्यक्ति का प्रतीक है जिसने आत्म-शुद्धि की प्रक्रिया द्वारा स्वयं पर विजय प्राप्त कर ली है। 'जैन' एक धार्मिक भक्त है जो अंततः अपनी इच्छाओं, इंद्रियों और अंगों पर नियंत्रण पाने के लिए लगातार प्रयास कर रहा है ताकि अंततः वह स्वयं का स्वामी बन सके।

यह दर्शन कुछ हद तक भगवान कृष्ण द्वारा 'भगवत गीता में समझाए गए वैदिक दर्शन के समान है, जहां भगवान कृष्ण एक पूर्ण मानव

के गुणों को 'स्थितप्रज्ञ के रूप में वर्णित करते हैं। गीता में एक संतुलित इंसान का वर्णन करने के लिए कछुए के उदाहरण का उपयोग किया है, जिसने अपने अंगों पर पूर्ण नियंत्रण प्राप्त कर लिया है जैसे कि कछुआ करता है जो जब भी जरूरत होती है, अपने शरीर के अंगों को खोलता है और जब जरूरत नहीं होती है, तो उन्हें बंद कर देता है।

इस प्रकार 'हिन्दू धर्म को भारत का एक सामान्य धर्म एवं सामान्य आस्था कहा जा सकता है जबकि 'जैन धर्म हिन्दू धर्म की सर्वोत्कृष्टता के आधार पर बना एक विशेष धर्म है। जैन धर्म अहिंसा और करुणा पर अधिक जोर देता है। हिंदुओं से उनका एकमात्र अंतर यह है कि जैन भगवान जैसे किसी भी निर्माता में विश्वास नहीं करते हैं, बल्कि केवल पूर्ण मानव की पूजा करते हैं, जिन्हें वे तीर्थंकर कहते हैं। भगवान महावीर तीर्थंकरों की पीढ़ी में से एक थे। तीर्थंकर पूर्ण मानव-प्राणी के प्रतीक हैं जिन्होंने मानसिक और शारीरिक स्तर पर मानवीय उत्कृष्टता हासिल की है। दार्शनिक अर्थ में, जैन धर्म ब्रह्मसमाजी, आर्यसमाजी और लिंगायत जैसे हिंदुओं के बीच एक सुधारवादी आंदोलन है। जैन धर्म तीन के मुख्य सिद्धांत अहिंसा, अनेकांतवाद और अपरिग्रह हैं। {देखें: 1) धर्म और नैतिकता का विश्वकोश खंड 7 पृ. 465: 2) जैनियों का इतिहास, ए.के. रॉय द्वारा रचित पृष्ठ 5 से 23 और विनोबा साहित्य खंड. 7 पृ. 271 से 284}

जैनियों की दार्शनिक एवं वैचारिक मान्यताओं एवं आचरण के अधिक

विस्तार में जाना आवश्यक नहीं है। राष्ट्रीय अल्पसंख्यक आयोग की सिफ़ारिशों में इनका आवश्यक विस्तार से व्यवहार किया गया है।

हमने यह दिखाने के लिए कि अल्पसंख्यक की अवधारणा संविधान के निर्माण से पहले और उसके निर्माण के समय और बाद में इसके कामकाज के दौरान कैसे विकसित हुई, भारत के इतिहास और स्वतंत्रता के लिए उसके संघर्ष का पता लगाया है। इतिहास हमें बताता है कि भारत में कुछ धार्मिक समुदाय थे जिन्हें उनके धार्मिक और सांस्कृतिक अधिकारों की सुरक्षा का पूरा आश्वासन दिया जाना आवश्यक था। भारत सबसे बड़ी संख्या में धर्मों और भाषाओं वाले लोगों का देश है जो एक साथ रहते हैं और एक राष्ट्र बनाते हैं। धर्मों, संस्कृति और जीवन शैली की इतनी विविधता दुनिया के किसी भी हिस्से में नहीं मिलती है। जॉन स्टुअर्ट मिल ने भारत को ''बंद जगहों पर स्थित दुनिया के रूप में वर्णित किया। भारत लघु रूप में एक विश्व है। संविधान के अनुच्छेद 25 से 30 का समूह, जैसा कि भारत विभाजन की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि से पता चलता है, केवल चिन्हित अल्पसंख्यकों को सुरक्षा की गारंटी देने और इस प्रकार देश की अखंडता को बनाए रखने के लिए था। धार्मिक अल्पसंख्यकों की सूची में जोड़ना संविधान निर्माताओं के विचार में नहीं था। संविधान अपने सभी अंगों के माध्यम से सभी के धार्मिक, सांस्कृतिक और शैक्षिक अधिकारों की रक्षा के लिए प्रतिबद्ध है। अनुच्छेद 25 से 30 बहुसंख्यक और अल्पसंख्यक दोनों

समूहों को सांस्कृतिक और धार्मिक स्वतंत्रता की गारंटी देते हैं। एक लोकतांत्रिक समाज का आदर्श, जिसने समानता के अधिकार को अपने मूल सिद्धांत के रूप में अपनाया है, बहुसंख्यक और अल्पसंख्यक तथा तथाकथित अगड़े और पिछड़े वर्गों का उन्मूलन होना चाहिए। संविधान ने प्रत्येक भारतीय के लिए उसके धर्म, भाषा, संस्कृति या आस्था की परवाह किए बिना एक समान नागरिकता स्वीकार की है। नागरिकता के लिए एकमात्र योग्यता व्यक्ति का भारत में जन्म होना है। हमें ऐसी प्रबुद्ध नागरिकता विकसित करनी होगी जहां किसी भी धर्म या भाषा का प्रत्येक नागरिक अपने अधिकारों का दावा करने के बजाय दूसरे समूह के अधिकारों की रक्षा के लिए अपने कर्तव्यों और जिम्मेदारियों के बारे में अधिक चिंतित हो। संवैधानिक लक्ष्य नागरिकता का विकास करना है जिसमें हर किसी को धर्म, आस्था और पूजा की पूर्ण मौलिक स्वतंत्रता का आनंद मिले और किसी को भी अल्पसंख्यक या बहुसंख्यक द्वारा अपने अधिकारों के अतिक्रमण की आशंका न हो।

संवैधानिक आदर्श, जिसे संविधान में मौलिक अधिकारों और मौलिक कर्तव्यों के अध्यायों के तहत अनुच्छेदों के समूह से इकट्ठा किया जा सकता है, ऐसी सामाजिक परिस्थितियों का निर्माण करना है जहा अल्पसंख्यक या बहुसंख्यक के अधिकारों की रक्षा या रक्षा करने की कोई आवश्यकता नहीं है।

उपर्युक्त संवैधानिक लक्ष्य को केंद्र या राज्य स्तर पर गठित अल्पसंख्यक आयोगों को ध्यान में रखना होगा। अल्पसंख्यकों के लिए गठित आयोगों को अपनी गतिविधियों को धीरे-धीरे अल्पसंख्यक और बहुसंख्यक वर्गों को समाप्त करके भारत की अखंडता और एकता बनाए रखने के लिए निर्देशित करना होगा। यदि, केवल एक अलग धार्मिक विचार या कम संख्यात्मक ताकत या स्वास्थ्य, धन, शिक्षा, शक्ति या सामाजिक अधिकारों की कमी के आधार पर, भारतीय समाज के एक वर्ग के 'अल्पसंख्यक' दर्जे के दावे पर विचार किया जाता है और उसे स्वीकार कर लिया जाता है, तो वहां भारत जैसे बहु-धार्मिक और बहुभाषी समाज में ऐसे दावों का कोई अंत नहीं होगा। नागरिकों के एक समूह द्वारा दावा किए जाने पर नागरिकों के दूसरे समूह द्वारा भी वैसा ही दावा किया जाएगा और संघर्ष तथा कलह उत्पन्न होगा। इस प्रकार, हिन्दू समाज जाति पर आधारित होने के कारण स्वयं विभिन्न अल्पसंख्यक समूहों में विभाजित है। प्रत्येक जाति दूसरे से अलग होने का दावा करती है। जाति-ग्रस्त भारतीय समाज में, कोई भी वर्ग या लोगों का विशिष्ट समूह बहुमत में होने का दावा नहीं कर सकता है। हिंदुओं में सभी अल्पसंख्यक हैं. उनमें से कई अपनी कम संख्या के कारण ऐसी स्थिति का दावा करते हैं और इस आधार पर राज्य से सुरक्षा की उम्मीद करते हैं कि वे पिछड़े हैं। यदि प्रत्येक अल्पसंख्यक समूह दूसरे समूह से डरता है, तो आपसी भय और अविश्वास का माहौल बनेगा जो हमारे राष्ट्र की अखंडता के लिए गंभीर

खतरा पैदा करेगा। इससे भारत में बहुराष्ट्रीयता के बीज बोये जायेंगे। इसलिए, यह आवश्यक है कि अल्पसंख्यक आयोग इस प्रकार कार्य करे जिससे भारत के लोगों के विभिन्न वर्गों में बहुराष्ट्रीयता की भावना उत्पन्न होने से रोका जा सके।

आयोग को अधिनियम के तहत अधिसूचित अल्पसंख्यकों की सूची में जोड़े जाने के लिए विभिन्न समुदायों के दावों को प्रोत्साहित करने के बजाय, ऐसी सामाजिक स्थितियाँ बनाने में मदद करने के तरीके और साधन सुझाने चाहिए जहाँ अधिसूचित अल्पसंख्यकों की सूची धीरे.धीरे कम हो जाए और पूरी तरह से समाप्त हो जाए।

टीएमए पाई फाउंडेशन केस (उपरोक्त) में ग्यारह न्यायाधीशों की पीठ द्वारा यह निर्णय दिए जाने के बाद इन निष्कर्ष टिप्पणियों की आवश्यकता थी कि भाषाई और धार्मिक दोनों आधारों पर अल्पसंख्यकों के दावे प्रत्येक राज्य एक इकाई के रूप में होंगेै। भाषा के आधार पर देश का पुनर्गठन राज्य पुनर्गठन अधिनियम के तहत वर्ष 1956 में ही किया जा चुका है। राज्य के भीतर भाषा के आधार पर भाषाई अल्पसंख्यकों के साथ विभेदक व्यवहार समझ में आता है, लेकिन यदि धर्म के आधार पर अल्पसंख्यकों के लिए समान अवधारणा को प्रोत्साहित किया जाता है, तो पूरा देश, जो पहले से ही वर्ग और सामाजिक संघर्षों के अधीन है, विभिन्न विभाजनकारी ताकतों को आगे चलकर धार्मिक विविधता के आधार पर विभाजन का

सामना करना पड़ेगा। धर्म के आधार पर अल्पसंख्यक दर्जे के ऐसे दावों से लोगों के विभिन्न वर्गों को संवैधानिक गारंटी के हिस्से के रूप में विशेष सुरक्षा, विशेषाधिकार और उपचार मिलने की उम्मीद बढ़ जाएगी। ऐसी विखंडनकारी प्रवृत्तियों को प्रोत्साहन संवैधानिक लोकतंत्र की धर्मनिरपेक्ष संरचना के लिए एक गंभीर झटका होगा। हमें अपने देश को बहु-राष्ट्रवाद पर आधारित एक धार्मिक राज्य बनाने से बचना चाहिए। संक्षेप में कहें तो धर्मनिरपेक्षता की हमारी अवधारणा यह है कि 'राज्य का कोई धर्म नहीं होगा। राज्य सभी धर्मों और धार्मिक समूहों के साथ, धर्म, आस्था और पूजा के उनके व्यक्तिगत अधिकारों में किसी भी तरह से हस्तक्षेप किए बिना, समान रूप से और समान सम्मान के साथ व्यवहार करेंगे। आयोग अपनी गतिविधियों को उपरोक्त संवैधानिक परिप्रेक्ष्य, सिद्धांतों और आदर्शों के अनुरूप सही दिशा में रखने के लिए तत्पर रहे।

इन अवलोकनों और निष्कर्ष टिप्पणियों के साथ, यह अपील निस्तारित जाती है क्योंकि हमें नहीं लगता कि उच्च न्यायालय के रिट क्षेत्राधिकार और इसलिए, इस न्यायालय के अपीलीय क्षेत्राधिकार के प्रयोग में अपीलकर्ताओं को कोई राहत देने के लिए कोई मामला बनता है।

अपील निस्तारित।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल '**सुवास**' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी डॉ टीना शर्मा (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरणः यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।